श्रीमद्भागवत महापुराण का सांगीतिक महत्त्व

अमिता शर्मा*
लायका भाटिया*

'पुराण' अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ने वाली स्वर्णिम श्रृंखला है। पुराण भारतीय जीवन के पुराने चित्रों के अनुपम संग्रह हैं। इनमें जितनी निपुणता से हमारे देश की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की मोहक चर्चा की गई है, संभवतः उसकी तुलना में कोई अन्य सामग्री उपस्थित नहीं की जा सकती। यूं तो यह धार्मिक दृष्टिकोण से रचे गये पवित्र ग्रन्थ हैं और सर्वत्र भक्ति, ज्ञान, साधना, जप, तप, उपदेशादि आध्यात्मिक तत्वों के चिन्तन की ही इनमें प्रधानता है तथापि लौकिक व्यवहारों के सभी अंगों का वर्णन भी इनमें विपुलता से किया गया है। देवी भागवत में पुराणों की श्रेष्ठता प्रतिपादित की गई है। श्रुति और स्मृति का स्थान नेत्र है, परंतु पुराण तो धर्मरूपी पुरुष का ह्रदय है।

भारतीय वाङ्मय में अष्टादश पुराणों का अपना विशेष स्थान है तथा भागवत इन्हीं 18 पुराणों में से एक है। श्रीमद्भागवत पुराण साहित्य का मुकुट मणि है। वैष्णवों का तो यह सर्वस्व ही है। भारत वर्ष में जितने भी वैष्णव सम्प्रदाय प्रचलित हैं उन सभी में भागवत का वेदों के समान आदर है। वैष्णव सम्प्रदाय के इस महापुराण में कृष्ण की भक्ति की गई है। यद्यपि भागवत मुख्यतः भक्ति काव्य है तथापि मोक्ष प्राप्ति पर बल देता है।

इसमें 12 स्कन्ध, 335 अध्याय तथा 18,000 पद्य हैं। संगीत की दृष्टि से यह पुराण अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यूं तो अग्नि, वायु, हरिवंश आदि पुराणों में संगीत विषयक अनेक सदर्भ प्राप्त होते है तथापि भागवत पुराण स्वयं गेय है। इस पुराण का दशम स्कन्ध आकार में सबसे बड़ा है। संगीत की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। दशम स्कन्ध में 29–33 यह पांच अध्याय 'रासपंचाध्यायी' के नाम से जाने जाते है। इसमें गीत, अभिनय, वाद्य तथा नृत्य का वर्णन प्राप्त होता है। दशम स्कन्ध में लगभग 4000 गीत है। रागों का विवरण तथा गान की विद्या का वर्णन इसमें नहीं मिलता। वाद्यों में भेरी, दुन्दुभि , मृदंग, शंख, वीणा, वंशी आदि का वर्णन

अध्यक्ष संगीत विभाग पी.जी.जी.सी.जी.–11 चण्डीगढ़
शोधकर्त्री संगीत विभाग पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़

मिलता है। यह पुराण गीत तथा वाद्यों का भावात्मक प्रतीक है। इसमें संगीत की तीनों विधाओं गायन, वादन तथा नृत्य का समावेश है। इसके श्लोकों में गीत तथा वाद्यों का अद्भुत वर्णन है, जिसमें शब्द–माधुरी तथा अर्थ–चातुरी अत्यन्त आकर्षित करते है। भागवत पुराण रस तथा माधुर्य का स्त्रोत है। गीत और वाद्यों की ध्वनि द्वारा भावों के चित्रण में भागवत् अद्वितीय काव्य है।

भागवतीय साधना में भी संगीत का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। यत्रा–तत्रा भक्ति साधना के अन्तर्गत कीर्तन का उपदेश दिया गया है। इस प्रकार के कीर्तनों में संगीत के तीनों अंग अर्थात् गायन, वादन एवं नृत्य का प्रचलन था।

भागवत में संगीत के क्रियात्मक पक्ष के साथ–साथ सैद्धान्तिक पक्ष का भी विवरण प्राप्त होता है। क्रियात्मक पक्ष पर कई लेखकों द्वारा लेख प्राप्त होते है परन्तु संगीत का सैद्धान्तिक पक्ष अभी अपेक्षित है। नाद का विवरण भागवत में कई छंदों में प्राप्त होता है।

'इन्द्रियाणि मनस्यूर्मौ वाचि वैकारिकं मनः।
वाचं वर्णसमाम्नाये तमोंकारे स्वरे न्यसेत्।
ओंकारं बिन्दौ नादे तं तं तु प्राणे महत्यमुम।।

अर्थात् इन्द्रियों को दर्शनादि संकल्परूप मन में, वैकारिक मन को परा वाणी में और परा वाणी को वर्णसमुदाय में, वर्ण समुदाय को 'अ उ म्' इन तीन स्वरों के रूप में रहने वाले ऊँकार को बिन्दु में, बिन्दु को नाद में, नाद को सूत्रात्मा रूप प्राण में तथा प्राण को ब्रह्म में लीन कर देता है।

इसी प्रकार नाद ब्रह्म के साथ–साथ अनाहत नाद का भी उल्लेख भागवत में हुआ है, निम्नलिखित तीन श्लोकों में इसका विवरण है–

'समाहितात्मनो ब्रह्मन् ब्रह्मणः परमेष्ठिनः।
ह्द्याकाशादभून्नादो वृत्तिरोधद् विभात्यते।।
यदुपासनया ब्रह्मन् योगिनो मलमात्मनः।
द्रव्यक्रियाकारकारण्यं धूत्वा यान्त्यपुनर्भवम्।।
ततोध्भूत्त्रिावृदोंकारो योध्यक्तन्प्रभवः स्वराट्।
यत्तल्लिंग भगवतो ब्रह्मणः परमात्मनः।'

अर्थात् जिस समय परमेष्ठी ब्रह्माजी पूर्वसृष्टि का ज्ञान सम्पादन करने के लिये एकाग्रचित्त हुए, उस समय उनके ह्रदयाकाश से कण्ठ–तालु आदि स्थानों के संघर्ष से रहित एक अत्यन्त विलक्षण अनाहत नाद प्रकट हुआ। जब जीव अपनी मनोवृत्तियों को रोक लेता है, तब उसे भी उस अनाहत नाद का अनुभव होता है। बड़े–बड़े योगी उसी अनाहत नाद की उपासना करते हैं और उसके प्रभाव से अन्तः करण के द्रव्य (अधिभूत), क्रिया (अध्यात्म) और कारक (अधिदैव) रूप मल को नष्ट

करके वह परमगतिरूप मोक्ष प्राप्त करते हैं, जिसमें जन्म–मृत्यु रूप संसारचक्र नहीं है। उसी अनाहत नाद से 'अ' कार, 'उ' कार और 'म' कार रूप तीन मात्राओं से युक्त ऊँकार प्रकट हुआ। इस ऊँकार की शक्ति से ही प्रकृति अव्यक्त से व्यक्तरूप में परिणत हो जाती है। ऊँकार स्वयं भी अव्यक्त एवं अनादि है और परमात्मा–स्वरूप होने के कारण स्वयंप्रकाश भी है। जिस परम वस्तु को भगवान् ब्रह्म अथवा परमात्मा के नाम से पुकारते है, उसके स्वरूप का बोध भी ऊँकार के द्वारा ही होता है।

भागवत में बहुत ही सुन्दर वाक्यों में संगीत के सैद्धांतिक पक्ष का विवरण हुआ है। अनाहत नाद सहित उदात, अनुदात स्वरों का सुन्दर उल्लेख भी भागवत में हुआ है–

'स एष जीवो विवरप्रसूतिः प्राणेन घोषेण गुहां प्रविष्टः।
मनोमयं सूक्ष्ममुपेत्य रूपं मात्रा स्वरो वर्ण इति स्थविष्ठः।।'

अर्थात् जिस परमात्मा का परोक्षरूप से वर्णन किया जाता है, वे साक्षात् अपरोक्ष–प्रत्यक्ष ही हैं, क्योंकि वे ही निखिल वस्तुओं को सत्ता–स्फूर्ति–जीवन–दान करने वाले हैं, वे ही पहले अनाहत नाद स्वरूप परा वाणी नामक प्राण के साथ मूलाधारचक्र में प्रवेश करते हैं। उसके बाद मणिपूरकचक्र (नाभि–स्थान) में आकर पश्यन्ती वाणी का मनोमय सूक्ष्मरूप धारण करते हैं। तदनन्तर कण्टदेश में स्थित विशुद्ध नामक चक्र में आते हैं और वहाँ मध्यमा वाणी के रूप में व्यक्त होते हैं। फिर क्रमशः मुख में आकर ह्रस्व–दीर्घादि मात्रा, उदात्त–अनुदात्त आदि स्वर तथा ककारादि वर्णरूप स्थूलवैखरी वाणी का रूप ग्रहण कर लेते हैं।

इसी प्रकार सात स्वरों का उल्लेख भी भागवत में हुआ है।

'ऊष्माणमिन्द्रियाण्याहुरन्तःस्था बलमात्मनः।
स्वराः सप्त विहोरण भवन्ति स्म प्रजापतेः।।

अर्थात् उनकी इन्द्रियों को ऊष्मवर्ण ;श ष स हद्ध और बल को अन्तःस्थ (य र ल व) कहते हैं, तथा उनकी क्रीड़ा से निषाद, ऋषभ, गान्धार, षड्ज, मध्यम, धैवत और पंचम–ये सात स्वर हुए।

आगे भी स्वरों का उल्लेख हुआ है।

'वयांसि तदत्याकरणं विचित्रं मनुर्मनीषा मनुजो निवासः।
गन्धर्वविद्याधरचारणाप्सरः स्वरस्मृतीरसुरानीकवीर्यः।'

अर्थात् तरह–तरह के पक्षी उनके अद्भुत रचना कौशल है। स्वायम्भुव मनु उनकी बुद्धि हैं और मनु की सन्तान मनुष्य उनके निवासस्थान हैं। गन्धर्व, विद्याधर, चारण और अप्सराएँ उनके षड्ज आदि स्वरों की स्मृति है। दैत्य उनके वीर्य हैं।

भागवत में रागों का नाम तो नहीं है परन्तु राग आलापने का विवरण अवश्य प्राप्त होता है साथ ही ध्रुपद गान का विवरण है–

'काचित् समं मुकुन्देन स्वरजातीरमिश्रिताः।
उन्निन्ये पूजिता तेन प्रीयता साधु साध्विति।
तदेव ध्रुवमुन्निये तस्यै मानं च बह्वदात।।'

अर्थात् कोई गोपि भगवान् के साथ–उनके स्वर में स्वर मिलाकर गा रही थी। वह श्रीकृष्ण के स्वर की अपेक्षा और भी ऊँचे स्वर से राग अलापने लगी। उसके विलक्षण और उत्तम स्वर को सुनकर वे बहुत ही प्रसन्न हुए और वाह–वाह करके उसकी प्रशंसा करने लगे। उसी राग को एक दूसरी सखी ने ध्रुपद में गाया। उसका भी भगवान् ने बहुत सम्मान किया।

ऊपरलिखित श्लोक में ध्रुपद गायन शैली का विवरण हुआ है। इसके साथ ही राग–रागिनियों तथा जातियों को बासुँरी पर बजाने का भी उल्लेख भली–भांति हुआ है–

'विविधगोपचरणेषु विदग्धो वेणुवाद्य उरूधा निजशिक्षाः।
तव सुतः सति यदाधरबिम्बे दत्तेवेणुरनयत् स्वरजातीः।।
सवनशस्तदुपधार्य सुरेशाः शक्रशर्वपरमेष्ठिपुरोगाः।
कवय आनतकन्धरचित्ता कश्मलं ययुरनिश्चिततत्त्वाः।।'

अर्थात् सतीशिरोमणि यशोदाजी! तुम्हारे सुन्दर कुवँर ग्वालबालों के साथ खेल खेलने में बड़े निपुण हैं। रानी जी! तुम्हारे लाड़ले लाल सबके प्यारे तो हैं ही, चतुर भी बहुत हैं! देखो, उन्होंने बासुँरी बजाना किसी से सीखा नहीं। अपने ही अनेकों प्रकार की राग–रागिनियाँ उन्होंने निकाल लीं। जब वे अपने बिम्बाफल सदृश लाल–लाल अधरों पर बाँसुरी रखकर ऋषभ, निषाद आदि स्वरों की अनेक जातियाँ बजाने लगते हैं, उस समय वंशी की परम मोहिनी और नयी तान सुनकर ब्रह्मा, शंकर और इन्द्र और बड़े–बड़े देवता भी–जो सर्वज्ञ हैं– उसे नहीं पहचान पाते। वे इतने मोहित हो जाते हैं कि उनका चित्त तो उनके रोकने पर भी उनके हाथ से निकलकर वंशीध्वनि में तल्लीन हो ही जाता है, सिर भी झुक जाता है, और वे अपनी सुध–बुध खोकर उसी में तन्मय हो जाते हैं।

इसी प्रकार मूर्च्छना, आरोह–अवरोह तथा तान का उल्लेख भी है–

'का स्त्रायंग ते कलपदायतमूर्च्छितेन
सम्मोहिताघ्र्यचरितान्न चलेत्त्रिलोक्याम्।
त्रैलोक्यसौभगमिदं च निरीक्ष्य रूपं
यद् गोद्विजद्रुममृगाः पुलकान्यबिभ्रन्।।'

अर्थात् प्यारे श्यामसुन्दर! तीनों लोकों में भी और ऐसी कौन–सी स्त्री है, जो मधुर–मधुर पद और आरोह–अवरोह–क्रम से विविध प्रकार की मूर्च्छनाओं से युक्त तुम्हारी वंशी की तान सुनकर तथा इस त्रिलोकसुन्दर मोहिनी मूर्ति को जो

अपने एक बूँद सौन्दर्य से त्रिलोकी को सौन्दर्य का दान करती है एवं जिसे देखकर गो, पक्षी, वृक्ष और हरिन भी रोमांचित, पुलकित हो जाते हैं– अपने नेत्रों से निहारकर आर्य–मर्यादा से विचलित न हो जाय, कुल–कान और लोकलज्जा को त्यागकर तुममें अनुरक्त न हो जाय।

मधुर संगीत का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ है। गन्धर्वों द्वारा अपने आपको संगीत सुनाने वालों की तरह प्रस्तुत करने का भी उल्लेख है।

'वयं विभो ते नटनाट्यगायका येनात्मसाद् वीर्यबलौजसा कृताः।
स एष नीतो भवता दशामिमां किमुत्पथस्थ कुशलाय कल्पते।।'

अर्थात् प्रभो! हम आपके नाचने वाले, अभिनय करने वाले और संगीत सुनाने वाले सेवक हैं। इस दैत्य ने अपने बल, वीर्य और पराक्रम से हमें अपना गुलाम बना रखा था। उसे आपने इस दश को पहुँचा दिया। सच है, कुमार्ग से चलने वाले का भी क्या कभी कल्याण हो सकता है?

भागवत में वैसे तो राग–रागिनियों का उल्लेख कई संदर्भों में प्राप्त होता है परन्तु कितने राग थे, उनकी कितनी रागिनियाँ थी तथा रागों के नामों का विवरण, भागवत में नहीं है। इसी तरह ध्रुपद के अलावा भी किसी गायन विधा का उल्लेख हमें प्राप्त नहीं होता। वादन में भी वाद्य यन्त्रों के नामों का उल्लेख है परन्तु उनकी वादन विधियों का विवरण नहीं है इसके साथ वंशी का आध्यात्मिक उल्लेख काफी हद तक है। भागवत में नृत्य की शैली का भी विवरण प्राप्त नहीं होता। विभिन्न टीकाकारों द्वारा रास नृत्य से कुछ नृत्य शैलियों का उल्लेख प्राप्त होता है परन्तु ताण्डव नृत्य के अलावा नृत्य शैली का कोई भी संकेत भागवत में नहीं है। परन्तु कृष्ण तथा गोपियों द्वारा जो रास नृत्य किए जाने का विवरण है वह बहुत ही उत्कृष्ट कोटि का नृत्य जिस पर भिन्न–भिन्न आचार्यों द्वारा भाष्य तथा टीकाएँ लिखीं गई।

वैसे तो भागवत में किसी विशेष नृत्य शैली या गायन शैली का उल्लेख नहीं परन्तु फिर भी संगीत इससे काफी ज्यादा प्रभावित रहा है। भिन्न–भिन्न बन्दिशों का श्रीकृष्ण से सम्बन्धित होना तथा कृष्ण का निपूर्ण वंशी वादक होना और गोपियों संग रास नृत्य करना इत्यादि इस बात को सिद्ध करता है कि भागवत संगीत की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। जिसका प्रत्येक श्लोक गेय है तथा जिसमें संगीत अपनी चर्मोत्कृष्ट स्थिति पर था।

संदर्भ

1 श्रुति–स्मृति उभे नेत्रे पुराणं हृदयं स्मृतम। (देवी भागवत–11.1.21)
2 भा0 7 / 15 / 53

3 भा0 12 / 16 / 37–39
4 भा0 11 / 12 / 17
5 भा0 3 / 12 / 47
6 भा0 2 / 1 / 36
7 भा0 10 / 33 / 10
8 भा0 10 / 35 / 14–15
9 भा0 10 / 29 / 40
10 भा0 7 / 8 / 50

संदर्भ ग्रन्थ सूची

मूल ग्रंथ

1. भगवतस्तुतिसंग्रह पं. नित्यनन्द (संग्रहकर्ता और अनुवादक), प्रकाशन एवं मुद्रक, गीताप्रेस, गोरखपुर–273005, सं. 2066
2. 'श्रीमद्भागवत महापुराण' वेदव्यास, प्रकाशक एवं मुद्रक गीताप्रेस, गोरखपुर–273005, सं. 2072

सहायक ग्रंथ

1. उपाध्याय बलदेव भारतीय साहित्य शास्त्र, प्रसाद परिषद् काशी, सम्वत्त 2012
2. उपाध्याय बलदेव भारतीय दर्शन, चौखम्भा वाराणसी, 1976
3. गैरोला वाचस्पति भारतीय संस्कृति और कला, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, 1973
4. परांजपेय शतचंद्र श्रीधर भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी, 1969
5. मिश्रा अरूण भारतीय कंठ संगीत और वाद्य संगीत, कनिष्क पब्लिशर्स नई दिल्ली–11002

पत्रिकाएँ

1. कल्याण गीता प्रेस, गोरखपुर
2. संगीत संगीत कार्यालय, हाथरस (उ. प्र.)